Bommai Case : कर्नाटक के संदर्भ में राज्यपाल की शक्तियों की समीक्षा

देश के संविधान में कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण पद हैं जो सीधे तौर पर सरकार तो नहीं चलाते लेकिन संवैधानिक तौर पर उनकी भूमिका किसी भी पद या जिम्मेदारी से बड़ी होती है. इनमें से एक पद है है – राज्यपाल. 1960 के दशक में जब राज्यों में गठबंधन की राजनीति का उदय नहीं हुआ था तब तक राज्यपाल को मात्र राज्य के संवैधानिक प्रमुख के तौर पर ही जाना जाता था और कई बार इस पद को मात्र शोभा का पद कहा जाता रहा. लेकिन बदलते राजनैतिक माहौल में राज्यपाल की भूमिका भी मजबूत होती चली गई. खासकर राजनैतिक अस्थिरता के समय राज्यपाल की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती गई क्योंकि ऐसी परिस्थिति में ही राज्यपाल के विवेक की परीक्षा होती है. हालाँकि कई बार राज्यपालों की ओर से लिए गए फैसले चर्चा और विवादों का कारण भी बने. कई बार मामले कोर्ट में भी गए. कई बार राज्यपालों के फैसलों ने संवैधानिक प्रावधानों की नई-नई व्याख्याएँ सामने रखीं. मौजूदा परिस्थितियों की बात करें तो कर्नाटक में जो राजनैतिक हालात उभरे हैं,

बोम्मई केस

1988 में SR बोम्मई कर्नाटक के मुख्यमंत्री बने. उनकी सरकार गठबंधन की सरकार थी जिसमें कई दल शामिल थे. तत्कालीन राज्यपाल पी. वेंकटसुबैया ने 1989 में बोम्मई सरकार (Bommai Govt) को बर्खास्त कर दिया. इसके लिए आधार यह दिया गया कि Bommai सरकार ने अपना बहुमत खो दिया है क्योंकि कई विधानसभा सदस्यों ने दलबदल लिए हैं.

बोम्मई का कहना था कि मुझे बहुमत है या नहीं इसकी परीक्षा विधानसभा के अन्दर की जानी चाहिए. पर राज्यपाल नहीं माने और **धारा 356 के तहत** सरकार को खारिज कर दिया. इस निर्णय के विरुद्ध Bommai ने कर्नाटक उच्च न्यायाल में याचिका दायर की जहाँ उसे निरस्त कर दिया गया. तब वे सर्वोच्च न्यायालय चले गए. सर्वोच्च न्यायालय को इस मामले में फैसला करने में लगभग पाँच वर्ष लग गए. अंत में जाकर मार्च 11, 1994 में सर्वोच्च न्यायालय के 9 जजों के संवैधानिक बेंच ने अंतिम निर्णय दिया जो त्रिशंकु विधानसभाओं के मामले में एक सर्वकालिक निर्णय बन गया. इस आदेश के द्वारा धारा 356 के तहत राज्य सरकारों को मनमाने ढंग से बर्खास्त करने पर कुछ बंदिशें लगा दी गईं. इसे Bommai Case कहा जाता है.

निर्णय में कहा गया कि राष्ट्रपति किसी भी विधानसभा को सीधे भंग नहीं कर सकता, मात्र लंबित कर सकता है. बर्खास्तगी का आदेश तभी वैध होगा जब उस पर संसद के दोनों सदनों की सहमति मिल जाए. यदि दोनों सदन इस बर्खास्तगी पर सहमति नहीं देते हैं तो दो महीना पूरा होने पर बर्खास्तगी की घोषणा रद्द हो जायेगी और विधानसभा फिर से अस्तित्व में आ जाएगी.

बोम्मई केस में यह भी कहा गया कि **धारा 356** पर न्यायालय को समीक्षा करने का अधिकार होगा.

बोम्मई केस (Bommai Case) भारत के राजनैतिक इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण घटना है. सुप्रीम कोर्ट ने अपने फैसले में कहा कि बहुमत होने या न होने का फैसला सदन में होना चाहिए, किसी दूसरी जगह नहीं.

दरअसल संविधान के मुताबिक राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है. **अनुच्छेद 156 (1)** कहता है कि राज्यपाल राष्ट्रपति की मर्जी से अपने पद पर बना रहता है और उसकी मर्जी न हो तो राज्यपाल को इस्तीफा देना होता है. लेकिन आमतौर पर ऐसा नहीं होता. **अनुच्छेद 74** के मुताबिक़ राष्ट्रपति को सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद होगा जिसका प्रधान प्रधानमन्त्री होगा. राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद की सलाह के अनुसार काम करेगा. **अनुच्छेद 74 (2)** में कहा गया है कि मंत्रियों ने राष्ट्रपति को कोई सलाह दी और यदि दी है तो क्या दी है ...यह सवाल न्यायिक

पुनः अवलोकन से बाहर है. 1977 में हुए संविधान के 42वें संशोधन के बाद से मंत्रिपरिषद की सलाह राष्ट्रपति के लिए तकरीबन बाध्यकारी है.

सरकार बनाने के सम्बन्ध में राज्यपाल के फैसले

संविधान में इस बात का कोई जिक्र नहीं है कि मुख्यमंत्री अपनी नियुक्ति से पहले ही अपना बहुमत साबित करे. इस तरह राज्यपाल के पास अपने विवेक का इस्तेमाल करते हुए सरकार गठन के जो विकल्प बचते हैं, वे हैं –

1. उस व्यक्ति को सरकार बनाने का न्योता दिया जाए जिसके पास बहुमत हो.
2. यदि एक पार्टी के पास बहुमत नहीं है तो चुनाव पूर्व किये गए गठबंधन के नेता को न्योता दिया जाए.
3. यदि चुनाव पूर्व गठबंधन नहीं हुआ है तो सबसे बड़े दल के रूप में उभरी पार्टी के नेता को सरकार बनाने कहा जाए.
4. अगर सबसे बड़ा दल सरकार बनाने की स्थिति में नहीं है तो चुनाव के बाद हुए गठबंधन के नेता को सरकार बनाने कहा जाए.
5. अगर इनमें से भी कोई स्थिति नहीं है तो राज्यपाल ऐसे व्यक्ति को सरकार बनाने को कह सकता है जो उनके नजर में विधानसभा में बहुमत साबित करने के लायक हो.
6. जरुरी नहीं कि वह व्यक्ति विधायक ही हो, पर मुख्यमंत्री चुने जाने के 6 महीने के भीतर उसे राज्य के दोनों सदनों में से किसी एक का सदस्य निर्वाचित होना जरुरी है.
7. और अगर इनमें से कोई भी स्थिति नहीं बनती दिख रही तो राज्यपाल के सामने दुबारा चुनाव कराने की सिफारिश या राष्ट्रपति शासन की सिफारिश करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है.
8. एक बार यदि मुख्यमंत्री की नियुक्ति हो जाती है तो राज्यपाल की ओर से बतायी गई समयसीमा में विधानसभा के भीतर मुख्यमंत्री को अपना बहुमत साबित करना होता है.

अनुच्छेद 164 (2) में यह साफ़ कहा गया है कि मंत्रिपरिषद सामूहिक रूप से विधानसभा के प्रति उत्तरदायी होती है. संविधान के जानकारों ने इसका यह भी अभिप्राय निकाला है कि अगर मंत्रिपरिषद विधानसभा के प्रति अपना उत्तरदायित्व साबित करने में नाकाम साबित हो जाए या सदन का विश्वास खो दे तो उसे त्यागपत्र दे देना चाहिए. यदि अविश्वास प्रस्ताव पास होने के बावजूद कोई मुख्यमंत्री त्यागपत्र न दे तो राज्यपाल **अनुच्छेद 356** के तहत **राष्ट्रपति शासन** की सिफारिश कर सकता है.

अनुच्छेद 174 के अनुसार राज्यपाल की अनुमति के बिना राज्य सरकार न तो विधानसभा का सत्र बुला सकती है और न ही स्थगित कर सकती है. राज्यपाल विशेष परिस्थितियों में राज्य के विधानसभा को भंग भी कर सकता है. संविधान के **अनुच्छेद 174 (2)** के तहत उसे ये शक्तियाँ दी गई हैं. यही नहीं, राज्यपाल अपनी संवैधानिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए अपने विवेक का भी इस्तेमाल अपने फैसले लेने में कर सकता है. विधानसभा में बहुमत खो चुके मुख्यमंत्री की सलाह पर विधान सभा को भंग करने के लिए बाध्य नहीं है. राज्यपाल ऐसा तब भी कर सकता है जब उसे लगे कि मुख्यमंत्री अविश्वास प्रस्ताव से बचने के लिए ऐसी सिफारिश कर रहा है.

विभिन्न राज्यपालों के द्वारा पूर्व में किए गए विवादित फैसले

हरियाणा :- 1980 में हरियाणा के राज्यपाल जीडी तापसे बने. उस समय चौधरी देवीलाल हरियाणा के मुख्यमंत्री थे. साल 1982 में भजनलाल ने बहुमत का दावा किया. उन्होंने चौधरी देवीलाल के कई विधायकों को अपने पार्टी में मिला लिया. राज्यपाल तापसे ने भजनलाल को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया जिसपर देवीलाल ने कड़ा विरोध जताया. लेकिन अंत में भजनलाल ने विधानसभा में अपना बहुमत साबित कर दिया और सरकार बनाने में कामयाब हुए.

उत्तर प्रदेश :- 1998 में उत्तर प्रदेश में कल्याण सिंह की सरकार थी. 21 फरवरी, 1998 को राज्यपाल रोमेश भंडारी ने कल्याण सिंह सरकार को बर्खास्त कर दिया. इस बीच जगदम्बिका पाल को मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाई गई. कल्याण सिंह ने इस फैसले को इलाहाबाद हाई कोर्ट में चुनौती दी. कोर्ट ने राज्यपाल के फैसले को अंसवैधानिक करार दिया. जगदम्बिका पाल दो दिनों तक ही मुख्यमंत्री रह पाए और उन्हें इस्तीफा देना पड़ा. इसके बाद कल्याण सिंह फिर से राज्य के मुख्यमंत्री बने.

आंध्र प्रदेश :- 1983 से 1984 के बीच ठाकुर रामलाल आंध्र प्रदेश के राज्यपाल थे. उन्होंने इलाज के लिए देश से बाहर गए NT रामाराव के सरकार को बर्खास्त कर वित्तमंत्री एन.भास्कर राव को मुख्यमंत्री नियुक्त कर दिया. बाद में NT रामाराव ने राज्यपाल के खिलाफ मोर्चा खोल दिया. इसके बाद शंकर दयाल शर्मा राज्य के राज्यपाल बने और फिर उन्होंने एक बार फिर 1984 में आंध्रप्रदेश की सत्ता NT रामाराव के हाथों में सौंप दी.

झारखण्ड :- 2005 में झारखण्ड में राज्यपाल सैयद सिब्ते रजी ने त्रिशंकु विधानसभा की स्थिति में शिबू सोरेन को मुख्यमंत्री की शपथ दिलाई. हालाँकि शिबू सोरेन विधान सभा में अपना बहुमत साबित नहीं कर पाए और 9 दिनों के बाद ही उन्हें अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा. इसके बाद अर्जुन मुंडा के नेतृत्व में NDA की सरकार बनी.

बिहार :- बिहार भी राज्यपाल के फैसलों से उत्पन्न विवादों से अछूता नहीं रहा है. 2005 में राज्यपाल बूटा सिंह ने बिहार विधानसभा भंग कर दी. फरवरी 2005 में हुए विधानसभा चुनाव में किसी भी पार्टी को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला था. राज्य सरकार ने राज्यपाल के फैसले के विरोध में सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की. सुप्रीम कोर्ट ने बूटा सिंह के फैसले को असंवैधानिक बताया.

कर्नाटक :- 2009 में राज्य के राज्यपाल बने हंसराज भारद्वाज ने BJP की येदियुरप्पा सरकार पर विधानसभा में गलत तरीके से बहुमत साबित करने का आरोप लगाया और उसे दुबारा साबित करने को कहा था.

गोवा :- गोवा में 2017 में हुए विधानसभा चुनाव में किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला. 40 सदस्यीय विधानसभा में कांग्रेस 17 सीटें जीतकर सबसे बड़ी पार्टी बनी. भाजपा ने 13 सीटें हासिल की. हालाँकि BJP ने राज्यपाल से मिलकर सरकार बनाने का दावा पहले पेश किया और राज्यपाल मृदुला सिन्हा ने BJP गठबंधन को सरकार बनाने का मौका दिया.

राज्यपाल – संवैधानिक प्रावधान

1. संविधान का **अनुच्छेद 163** कहता है कि राज्यपाल को सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद होगी जिसका प्रधान मुख्यमंत्री होगा.
2. राज्यपाल के विवेकाधिकार वाले मामलों में मंत्रिपरिषद की सलाह बाध्यकारी नहीं है.
3. **अनुच्छेद 164** राज्यपाल के विवेकधिकारों से जुड़ा है. इसमें कहा गया है कि मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल करेगा. हालाँकि इस मामले में उसकी शक्ति **अनुच्छेद 75** में मिली राष्ट्रपति की शक्तियों जैसे ही है. यानी वह सरकार बनाने का न्यौता अपने विवेक के आधार पर लेगा. वैसे इस तरह के मामलों में राष्ट्रपति और राज्यपाल कानूनी सलाह भी लेते रहे हैं.
4. राष्ट्रपति कई मामलों में मंत्रिपरिषद के फैसले मानने के लिए बाध्य नहीं है. वह संसद के दोनों सदनों से पास किए गए बिल को अपनी सहमति देने से पहले रोक सकता है. वह धन विधेयक को छोड़कर किसी भी बिल को सदन के पास दुबारा भेज सकता है.
5. ठीक उसी तरह राज्य विधान सभा में धन विधेयक तभी पेश किया जाता है जब राज्यपाल ने विधेयक पेश करने के लिए अनुमति दे दी हो.
6. विधानसभा से पारित कानून पर राज्यपाल हस्ताक्षर करने से इनकार भी कर सकता है और उसके इस अधिकार को चुनौती नहीं दी जा सकती.

7. राज्यपाल किसी विधेयक को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए सुरक्षित रख सकता है. हालाँकि ऐसा करने के बाद उस विधेयक में राज्यपाल की भूमिका वहीं पर समाप्त हो जाती है. फिर उस विधेयक को स्वीकृति देना या न देना पूरी तरह राष्ट्रपति के विवेक पर निर्भर करता है.
8. हालाँकि क्षमादान के मामले में राष्ट्रपति की शक्तियाँ राज्यपाल की तुलना में ज्यादा हैं. राष्ट्रपति मृत्युदंड को माफ़ कर सकता है लेकिन राज्यपाल इसको केवल स्थगित कर दूसरे कोर्ट में विचारार्थ भेज सकता है. मृत्युदंड के मामले में माफी का अधिकार राज्यपाल को नहीं है.
9. इसी तरह **आपातकाल** में आपातकाल की घोषणा करने का अधिकार सिर्फ राष्ट्रपति को प्राप्त है. इधर राज्यपाल संवैधानिक संकट के हालात में राज्य सरकार को बर्खास्त करने की सिफारिश कर सकता है.

सरकारिया आयोग

संविधान निर्माताओं ने राष्ट्रपति और राज्यपाल को विवेकाधिकार की शक्ति कुछ ख़ास परिस्थतियों से निपटने के लिए ही दी थी लेकिन अक्सर इन अधिकारों को लेकर विवाद होते रहे हैं. खासकर कई बार राज्यपाल के विवेकाधिकार केंद्र-राज्य संबंधों में खटास के वजह बने. केंद्र ने राज्यपाल के पद को विवादों से परे करने और केंद्र-राज्य रिश्तों को मजबूत करने के उद्देश्य से **जून 1983 में सरकारिया आयोग** का गठन किया. इस commission में सिफारिश की गयी कि राज्यपाल के पद पर विभिन्न क्षेत्रों के गैर-राजनैतिक व्यक्तियों को नियुक्त किया जाए जो निष्पक्ष तरीके से अपने पद की जिम्मेदारियाँ निभाएँ. इसके लिए राज्य सरकार पैनल बनाकर नामों की सिफारिश करे. आयोग ने कहा कि राज्यपाल की नियुक्ति में सम्बंधित मुख्यमंत्री की सलाह ली जाए. इसके अलावा लोक सभा के स्पीकर और राज्यसभा के सभापति की सलाह भी इस नियुक्ति में शामिल हो.